International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2025; 2(4): 146-148
© 2025 IJMH
www.themultijournal.com

Received: 18-08-2025
Accepted: 25-08-2025
Publish : 27-08-2025

डॉ सुरेश कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर (संस्कृत),
भगवान परशुराम महाविद्यालय,
कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

Correspondence:
डॉ सुरेश कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर (संस्कृत),
भगवान परशुराम महाविद्यालय,
कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

शिक्षा ग्रंथों में नैतिक मूल्य

डॉ सुरेश कुमार

मानव जीवन की सार्थकता एवं उत्कृष्टता का आधार नैतिक मूल्य हैं। ये मूल्य ही मनुष्य को पशुता से देवत्व की ओर ले जाने वाली सीढ़ियाँ हैं। भारतीय संस्कृति और दर्शन में इन नैतिक मूल्यों के संरक्षण, संवर्धन एवं संप्रेषण का दायित्व शिक्षा पर ही नहीं, बल्कि उन शिक्षा-ग्रंथों पर भी रहा है, जो सहस्राब्दियों से हमारे जीवन के मार्गदर्शक रहे हैं। ये ग्रंथ केवल ज्ञान का भंडार नहीं हैं, बल्कि जीवन जीने की कला के सूत्रधार हैं। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, गीता, स्मृति ग्रंथ, नीति शास्त्र आदि अनेक ग्रंथों में नैतिकता के स्वरूप को अत्यंत सूक्ष्मता एवं व्यापकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह निबंध इन्हीं शिक्षा ग्रंथों में निहित नैतिक मूल्यों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करेगा।

वैदिक साहित्य में नैतिक मूल्य

वैदिक साहित्य भारतीय चिंतन की मूल भूमि है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में मानवीय आचरण के लिए मूलभूत नैतिक सिद्धांतों का उल्लेख मिलता है। वैदिक ऋषियों ने सत्य को सर्वोच्च मूल्य माना है। ऋग्वेद में कहा गया है -

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत् सत्यस्य परमं निधानम्॥[1]

सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं। यह सूक्त न केवल व्यक्तिगत जीवन में, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में भी सत्य के पालन पर बल देता है।

ऋत : वैदिक दर्शन का एक केंद्रीय विचार 'ऋत' है, जो ब्रह्मांड के नैसर्गिक एवं नैतिक नियम को दर्शाता है। सत्य, धर्म और नैतिकता इसी 'ऋत' के अंग हैं।

दानशीलता : वैदिक ऋषि दानशीलता को महान पुण्य मानते थे। धन को साझा करने और दूसरों की सहायता करने पर बार-बार जोर दिया गया है।

उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं विस्सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः॥[2]

कोई व्यक्ति धन को देखकर भी उसे नहीं देख पाता (अर्थात स्वीकार नहीं करता), कोई सुनकर भी नहीं सुनता। परंतु जो व्यक्ति दानशील है, वह अपने धन का परिगलन (बाँटना) कर देता है, जैसे सुंदर वस्त्र धारण करने वाली स्त्री अपने पति के प्रति उत्सुक रहती है।

उपनिषदों में नैतिक मूल्य

उपनिषद ज्ञान के साथ-साथ आचरण की शुद्धि पर भी बल देते हैं। वे आत्मज्ञान को ही परम लक्ष्य मानते हैं, किंतु इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए नैतिक जीवन अनिवार्य शर्त है।

दम (इंद्रिय निग्रह): इंद्रियों पर संयम रखना नैतिक जीवन की पहली सीढ़ी है।

दान (दानशीलता): निस्वार्थ भाव से देना।

दया: सभी प्राणियों के प्रति करुणा का भाव।

"दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्। अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्॥"[3]

जैसे मंत्रों में निहित है।

रामायण में नैतिक मूल्य

महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण 'धर्म' का महाकाव्य है। यह ग्रंथ मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के चरित्र के माध्यम से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नैतिकता का पाठ पढ़ाता है।

पितृ भक्ति : राम ने अपने पिता की आज्ञा का पालन करते हुए सहर्ष चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार किया। यह आज्ञापालन और त्याग का अनुपम उदाहरण है।

पत्नी के प्रति कर्तव्य: सीता के अपहरण के बाद राम का सम्पूर्ण जीवन उन्हें मुक्त कराने के लक्ष्य पर केंद्रित हो गया। यह पति के कर्तव्य का प्रतीक है।

भ्रातृ प्रेम : लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न का आचरण भाईचारे की पराकाष्ठा है। लक्ष्मण ने राम और सीता की सेवा में अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया।

सत्य का पालन : राम ने वचनबद्ध होकर बाली का वध किया और परशुराम के समक्ष अपना वचन निभाया।

आदर्श शासन : रामराज्य नैतिक शासन का पर्याय बन गया, जहाँ प्रजा सुखी और निर्भय थी।

महाभारत एवं श्रीमद्भगवद्गीता में नैतिक मूल्य

महाभारत को 'पंचम वेद' भी कहा जाता है। यह ग्रंथ जीवन के जटिल संघर्षों में धर्म की स्थापना का महाकाव्य है। इसका सार तत्व श्रीमद्भगवद्गीता है, जो नैतिक संकट के चरम बिंदु पर खड़े अर्जुन को जीवन का दर्शन सिखाती है।

निष्काम कर्म : गीता का केंद्रीय सन्देश है - फल की इच्छा छोड़कर अपने कर्तव्य का पालन करो।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥[4]

अर्थात, तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, फलों में कभी नहीं। इसलिए तू कर्मों के फल का हेतु मत हो और तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो।

स्वधर्म : प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वभाव और समाज में स्थिति के अनुसार निर्धारित कर्तव्य (स्वधर्म) का पालन करना चाहिए।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥[5]

अच्छी तरह से किया गया पराया धर्म (कर्तव्य) भी गुणरहित होने पर भी अपने धर्म से श्रेष्ठ नहीं है। अपने धर्म का पालन करते हुए मर जाना भी कल्याणकारी है, पराया धर्म भयावह होता है।

स्थितप्रज्ञ का आदर्श : गीता उस व्यक्ति का विवरण देती है जिसकी बुद्धि स्थिर हो गई है। ऐसा व्यक्ति सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय में समभाव रखता है।

अहिंसा, सत्य, अक्रोध : महाभारत में युधिष्ठिर का चरित्र सत्य और धर्म का प्रतीक है। भीष्म के शांति पर्व में राजधर्म, आपद्धर्म आदि का विस्तृत वर्णन नैतिकता का विश्वकोश प्रस्तुत करता है।

स्मृति ग्रंथों में नैतिक मूल्य

मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति आदि ग्रंथों में व्यक्ति, परिवार और समाज के लिए विस्तृत नैतिक नियमों का उल्लेख मिलता है। दस लक्षणों वाला धर्म: मनुस्मृति धर्म के दस लक्षण बताती है -

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥[6]

धैर्य, क्षमा, मन को वश में रखना, चोरी न करना, शुद्धता, इंद्रियों का निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और क्रोध न करना - ये दस धर्म के लक्षण हैं।

पंचमहायज्ञ : इन ग्रंथों में गृहस्थ के लिए पाँच नित्य कर्तव्य (यज्ञ) बताए गए हैं - ब्रह्मयज्ञ (अध्ययन-अध्यापन), देवयज्ञ (यज्ञादि), पितृयज्ञ (पितरों के लिए तर्पण), अतिथि यज्ञ (अतिथि सत्कार) और भूतयज्ञ (समस्त प्राणियों के प्रति दया)। ये पाँचों ही सामाजिक नैतिकता के स्तंभ हैं।

नीति शास्त्र एवं चाणक्य नीति में नैतिक मूल्य

चाणक्य नीति, कामंदकीय नीति आदि ग्रंथों में व्यावहारिक जीवन के लिए नैतिक सूत्र दिए गए हैं। ये ग्रंथ कूटनीति के साथ-साथ सदाचरण पर भी बल देते हैं।

सज्जनों का लक्षण : चाणक्य कहते हैं -

सुजनः क्रियासिद्ध्यर्थं नाचरति पापमपि।
किंतु साधारणो लोको न पापमपि कर्षति॥[7]

सज्जन व्यक्ति किसी कार्य की सिद्धि के लिए भी पाप नहीं करता, जबकि साधारण लोग पाप से भी डरते नहीं हैं।

मित्रता का महत्व : इन ग्रंथों में अच्छे मित्रों का चयन और उनके साथ नैतिक व्यवहार का विवेचन किया गया है। शिक्षा ग्रंथों में नैतिक मूल्यों की वर्तमान में प्रासंगिकता आज का युग भौतिकवाद, उपभोक्तावाद और व्यक्तिवाद से ग्रस्त है। ऐसे में शिक्षा ग्रंथों में वर्णित नैतिक मूल्यों की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है।

उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे शत्रुसङ्कटे।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः॥[8]

1. भ्रष्टाचार का निवारण : यदि समाज के प्रत्येक व्यक्ति के मन में 'सत्यमेव जयते' का भाव और 'निष्काम कर्म' का दर्शन बैठ जाए, तो भ्रष्टाचार स्वतः ही समाप्त हो जाएगा।

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत् सत्यस्य परमं निधानम्॥[9]

2. सामाजिक समरसता : वसुधैव कुटुम्बकम् (सम्पूर्ण पृथ्वी ही एक परिवार है) का विचार आज के वैश्विक समाज में सद्भाव बनाए रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

3. पर्यावरण संरक्षण : वृक्षों, नदियों, पृथ्वी और प्राणियों के प्रति दया का भाव ही सतत विकास का आधार है, जिसकी शिक्षा हमें प्राचीन ग्रंथों से मिलती है।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः॥[10]

4. युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन : आधुनिक शिक्षा प्रणाली में इन नैतिक मूल्यों को समावेशित करने से युवा पीढ़ी को जीवन के लक्ष्य निर्धारित करने और चरित्र निर्माण में सहायता मिलेगी।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।[11]

5. मानसिक स्वास्थ्य : गीता में वर्णित 'स्थितप्रज्ञ' का आदर्श तनाव, अवसाद और चिंता से ग्रस्त आधुनिक मनुष्य के लिए एक कारगर उपचार प्रस्तुत करता है।

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।

प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते॥[12]

निष्कर्ष

शिक्षा ग्रंथों में निहित नैतिक मूल्य किसी एक धर्म, जाति या काल के लिए नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए हैं। ये मूल्य सार्वभौमिक और शाश्वत हैं। सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, दान, शौच, इंद्रिय निग्रह, कर्तव्यपालन, पितृभक्ति, गुरु सम्मान, अतिथि सत्कार जैसे गुण मानवीय संबंधों को मधुर और समाज को सुसंगठित बनाते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इन ग्रंथों को कुरूप रूढ़ियों के आवरण से मुक्त करके, उनके मूल नैतिक सार को आत्मसात करें। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल डिग्री और रोजगार दिलाना नहीं, बल्कि एक संवेदनशील, जिम्मेदार और चरित्रवान नागरिक का निर्माण करना है। और यह लक्ष्य तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता, जब तक कि हमारी शिक्षा प्रणाली की नींव इन शाश्वत नैतिक मूल्यों पर स्थापित न हो। शिक्षा ग्रंथ हमें सिखाते हैं कि मनुष्य होने का सही अर्थ क्या है - और वह अर्थ है, नैतिक उत्कृष्टता के पथ पर अग्रसर होते हुए, अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।

संदर्भ-सूची –

1. मुण्डकोपनिषद 3.1.6
2. ऋग्वेद 10.71.4
3. वृहदारण्यक उपनिषद 5.2.1
4. भगवद्गीता 2.47
5. भगवद्गीता 3.35
6. मनुस्मृति 6.92
7. हितोपदेश , सुहृद्भेद 38
8. हितोपदेश, मित्रलाभ 39
9. मुण्डकोपनिषद् (3.1.6)
10. अथर्ववेद 12.1.12
11. कठोपनिषद् 1.3.14
12. श्रीमद्भगवद्गीता 2.65